बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 167

बहस में बदलाव ?

बहुत लंबे समय से यह कहा जाता रहा है कि देश के राजनेता व्यवस्थित आर्थिक सुधार की तरफ तभी बढ़ते हैं जब कोई संकट आसन्न होता है। बीते सप्ताह एक बार फिर यह बात सही साबित होती दिखी। इसके अलावा संभवत: अरुण शौरी ने कहा था कि मोदी सरकार के लिए अर्थव्यवस्था से जुड़ी सुर्खियों का प्रबंधन भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना अर्थव्यवस्था का प्रबंधन। इस बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण द्वारा शुक्रवार को आयोजित संवाददाता सम्मेलन का समय कितना महत्त्वपूर्ण था। बीते छह वर्षों में जीडीपी वृद्धि के लिहाज से सबसे धीमी तिमाही, विनिर्माण वृद्धि के 0.6 की निराशाजनक दर से बढ़ने जैसी अहम बातें बैंकिंग क्षेत्र को लेकर उठाए गए कदमों की आड़ में दब गईं। यहां दो तरह की बातें हैं। एक ओर अर्थव्यवस्था की गति वर्ष 2013 (तब तेल कीमतें आज से दोगुने स्तर पर थीं) के बाद से न्यूनतम स्तर पर हैं। बीती चार तिमाहियों में वृद्धि दर का औसत बमुश्किल 6.1 फीसदी रहा है। पिछली तिमाही में वृद्धि दर केवल 5 फीसदी रही है और मौजूदा तिमाही में भी इसके कमजोर रहने की आशंका है। यानी हमें वर्ष 2012-13 के बाद से सबसे धीमी वार्षिक वृद्धि के लिए तैयार रहना चाहिए।

सरकार ने हालात का अनुमान लगाया और एक दूसरी बहस को जन्म देकर इस बुरी खबर के प्रभाव को आंशिक रूप से निष्क्रिय कर दिया है। वित्तीय क्षेत्र में एक के बाद एक आ रहे संकटों ने व्यापक अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। ऋण का प्रवाह प्रभावित हुआ है और सरकार ने पहले अपना ध्यान बैंकों के पुनर्पूंजीकरण पर लगाया और अब उसने 10 बैंकों को विलय कर चार बैंकों में सीमित करने की घोषणा की है। दोनों ही घोषणाएं मजबूत बहीखातों वाले बैंक बनाने पर केंद्रित हैं। आरबीआई ने नीतिगत दरों को नौ वर्ष में न्यूनतम स्तर तक कर दिया है। अन्य घोषणाएं भी तेजी से आई हैं। बजट में की गई कर संबंधी घोषणाओं को वापस लिया गया है, खनन और खुदरा क्षेत्र को और अधिक विदेशी निवेश के लिए खोला जा रहा है और चीनी निर्यात पर व्यापक सब्सिडी दी जा रही है ताकि चीनी मिलें गन्ना किसानों का बकाया चुका सकें। वाणिज्यिक वाहनों की बिक्री में आ रही गिरावट से निपटने के लिए अवमूल्यन दरों को उदारतापूर्वक तैयार किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त कहा जा रहा है कि सरकार बुनियादी ढांचे में निवेश करेगी, निर्यात बढ़ाने को प्रोत्साहन देगी और अचल संपत्ति क्षेत्र को पैकेज दिया जाएगा। इस बीच कमजोर तेल कीमतों के बावजूद रुपये के बाह्य मूल्य में आई हालिया गिरावट बताती है कि अधिमूल्यित मुद्रा में अगर देरी से सुधार किया जाए तो भी अर्थव्यवस्था को कोई खास मदद नहीं मिलती। मोदी सरकार के इतिहास में ऐसा कोई दूसरा सप्ताह याद करना भी मुश्किल है जब आर्थिक नीति से संबंधित इतनी सारी घोषणाएं एक साथ सामने आई हों। सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों का कहना है कि सरकार अब सुनने के मिजाज में है और वह आलोचना पर भी ध्यान देना चाहती है। कारोबारी इस बात से प्रसन्न होंगे। परंतु इससे होगा क्या?

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

नीतिगत तौर पर देखें तो एक भारी भरकम पैकेज अगर कारगर नहीं होता और आशाओं पर तुषारापात करता है तो उसके बजाय ढेर सारी घोषणाओं का प्रवाह बेहतर माना जाएगा। सूचनाओं के निरंतर प्रवाह में जोखिम कम रहता है और यह अपेक्षाकृत अधिक खुला रवैया माना जाता है। चूंकि यह संचयी प्रभाव वाला होता है इसलिए लोग इसे लेकर अलग सोच अपनाते हैं और निवेश और व्यय में भी इजाफा करते हैं। इस दृष्टि से देखा जाए तो सरकार को कुछ और घोषणाएं करनी चाहिए और कुछ अहम कमियों को दूर करना चाहिए। उसके बाद ही लोगों के मिजाज बदलने की आशा की जा सकती है। प्राथमिक लक्ष्य के रूप में सरकार चक्रीय मंदी को रोकना चाहेगी ताकि खपत और व्यय में सुधार आ सके। सबसे पहले खपत में बदलाव लाना होगा क्योंकि नकदी की तंगी से जूझ रही कंपनियां तब तक निवेश नहीं करेंगी जब तक बिक्री में सुधार नजर नहीं आएगा। बैंकर कहते हैं कि कारोबारी ऋण की मांग कमजोर है लेकिन खुदरा मांग त्योहारी मौसम में सुधर सकती है। बशर्ते कि आज की लंबित मांग तब असर दिखाए। बहरहाल, गन्ना किसानों की समस्या हल करने के अलावा सरकार ने ग्रामीण मांग में सुधार के लिए कुछ खास नहीं किया है। ध्यान रहे कि कृषि उत्पादों का मूल्य कमजोर रहा है और ग्रामीण क्षेत्रों का मेहनताना पांच वर्ष से एक ही स्तर पर रुका हुआ है। इसके अतिरिक्त तमाम ढांचागत मसले तो हैं ही। जाहिर है अभी काफी कुछ करने की आवश्यकता है।

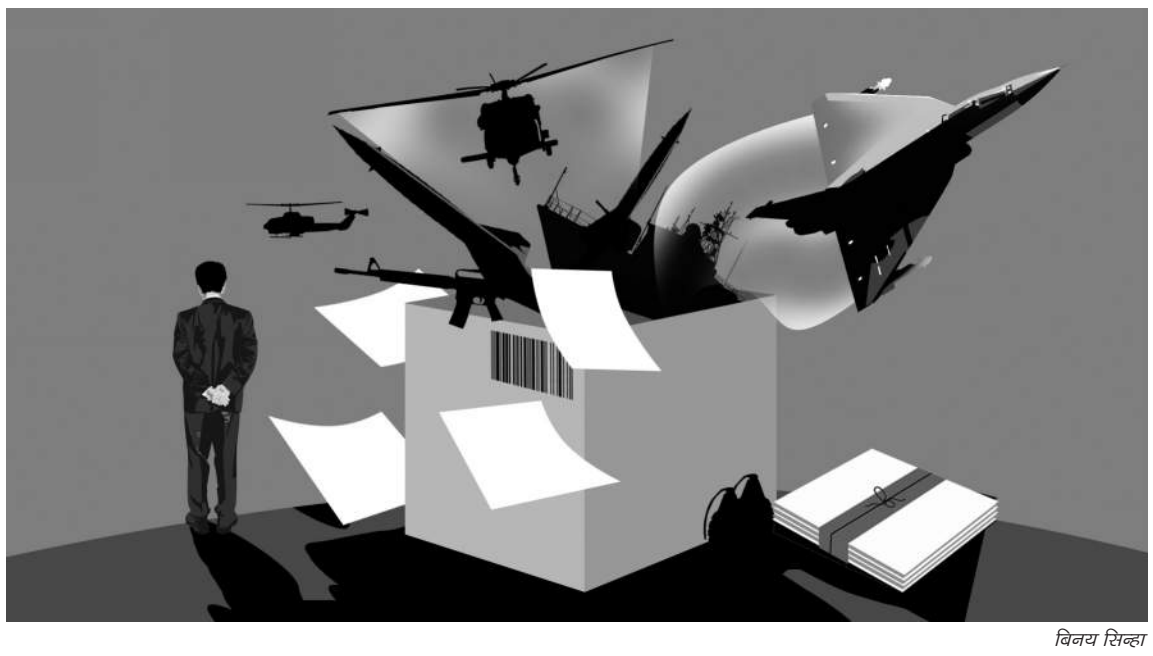

बिनय सिन्हा

आयुध कारखाने मजबूत बनाने की कवायद

देश भर में आयुध कारखानों का संचालन करने वाले ओएफबी को कंपनी बनाने के बाद ही यह रक्षा उत्पादन में अपनी असरदार भूमिका निभा सकता है। बता रहे हैं **लक्ष्मण कुमार बेहड़ा**

सरकार ने साहसिक कदम उठाते हुए देशभर में 41 आयुध कारखानों का संचालन करने वाले आयुध कारखाना बोर्ड (ओएफबी) को कंपनी में तब्दील करने का प्रस्ताव रखा है। इन कारखानों में 82,000 से भी अधिक कर्मचारी काम करते हैं। इनके श्रम संगठनों को सरकार का यह फैसला रास नहीं आया जिसके बाद वे 20 अगस्त से एक महीने की हड़ताल पर चले गए। हालांकि रक्षा मंत्रालय के शीर्ष अधिकारियों से कई दौर की बातचीत के बाद यह हड़ताल वापस ले ली गई है लेकिन भविष्य में फिर हड़ताल होने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता है। दरअसल समझौते के लिए रखे गए प्रस्ताव से इस संगठन के बुनियादी सरकारी ढांचे को ही खतरा पैदा हो सकता है।

ऐसे में क्या सरकार को अपने कदम पीछे खींच लेने चाहिए या अपने फैसले पर डटे रहना चाहिए? साक्ष्यों के अवलोकन से यही लगता है कि रक्षा मंत्रालय को अपने फैसले पर कायम रहना चाहिए क्योंकि ओएफबी को कंपनी बनाना न केवल इसे दीर्घजीवी बनाने के हित में है बल्कि देश की रक्षा तैयारी और आत्म-निर्भरता के लिए भी ऐसा करना जरूरी है।

ब्रिटिशकालीन ओएफबी का गठन वर्ष 1802 में हुआ था और यह भारत सरकार का सबसे पुराना एवं वाणिज्यिक गतिविधि वाला सबसे बड़ा विभागीय संगठन है। करीब 12,800 करोड़ रुपये के कारोबार वाले ओएफबी का टैंक एवं हथियारबंद वाहन से लेकर छोटे हथियारों, गोला-बारूद एवं सैन्य साजोसामान जैसे तमाम उत्पादों में ऐतिहासिक रूप से एकाधिकार रहा है। लेकिन कई वजहों से यह संगठन अपने अपेक्षित स्तर से नीचे ही रहा है।

एक सरकारी विभाग होने से ओएफबी पर सशस्त्र बलों को बेचे जाने वाले अपने उत्पादों से लाभ कमाने से प्रतिबंध है। ऐसा होने से ओएफबी अपने सांगठनिक एवं उत्पादन क्षमता में सुधार के लिए अधिक प्रोत्साहित नहीं हो पाता है। इसके अलावा उसे उत्पादन में आई समूची लागत उपभोक्ताओं से ही वसूलने की मंजूरी होती है। उत्पादन में लागत प्लस का यह नजरिया बेअसर माना जाता है और इससे रक्षा मंत्रालय पर अतिरिक्त बोझ पड़ता है।

हालांकि ओएफबी के लिए सबसे बड़ी समस्या यह रही है कि इसे निर्णय-निर्माण के स्तर पर बहुत सीमित अधिकार होते हैं। रक्षा मंत्रालय का छोटा विभाग होने के नाते वित्त, मानव संसाधन, शोध एवं विकास, कारखानों के आधुनिकीकरण और संयुक्त उद्यम एवं अनुषंगी इकाइयां बनाने जैसे मामलों में फैसले ओएफबी के स्तर पर नहीं लिए जाते हैं। बाहरी एजेंसियों के निर्णय-निर्माण का अफसरशाही वाला रवैया और नतीजों के बजाय कायदे-कानून पर अधिक जोर देने से ओएफबी के पास अपने दम पर खड़े होने और जवाबदेह होने की बहुत कम गुंजाइश ही रह जाती है। दिल्ली के सत्ता गलियारे से काफी दूर होने और शीर्ष अधिकारियों के जल्द बदले जाने से ओएफबी की चिंता और बढ़ जाती है। गत 10 वर्षों में ही ओएफबी के 15 चेयरमैन रह चुके हैं। शीर्ष नेतृत्व में ऐसे त्वरित बदलाव से ओएफबी को रणनीतिक दृष्टि एवं दिशा नहीं मिल पाती है।

वैसे ओएफबी ने 200 साल से पुराने इतिहास और विशाल परिसंपत्ति आधार के मद्देनजर अपना प्रदर्शन सुधारने के लिए खुद भी बहुत कम प्रयास किए हैं। हाल यह है कि आज भी यह संगठन अपने किसी उत्पाद के लाभप्रद होने का दावा नहीं कर सकता है क्योंकि इसके टर्नओवर का 75-80 फीसदी आयातित तकनीक से ही आता है।

नवाचार को अहमियत नहीं देने के अलावा ठेके समय पर पूरा करने में देरी, निम्न श्रम उत्पाद का और नाममात्र का निर्यात होने से इसके मुख्य हितधारक यानी भारतीय सेना परेशान हो गई है। सेना की कुल आपूर्ति में करीब 80 फीसदी हिस्सा ओएफबी का ही है। इसके अलावा सेना इन उत्पादों की खराब गुणवत्ता से भी परेशान है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (सीएजी) ने एक बार कहा था कि आयुध कारखानों में बने कुछ उत्पाद ऐसी खामियों के बावजूद ग्राहकों को दे दिए गए जिन्हें आसानी से देखा जा सकता था। प्रदर्शन के मोर्चे पर लगातार नाकाम रहने से परेशान सेना पहले ही करीब 275 उत्पादों को कम अहमियत वाला घोषित कर चुकी है जिससे इन उत्पादों पर ओएफबी का एकाधिकार कम हो चला है।

उम्मीद से कमतर प्रदर्शन होने से भारतीय रक्षा उत्पादन में ओएफबी की केंद्रीय भूमिका भी कमजोर होने लगी है। इसकी हैसियत इतनी गिर चुकी है कि रक्षा उत्पादन का लाइसेंस रखने वाली भारतीय निजी कंपनियां भी आज ओएफबी से अधिक उत्पादन कर रही हैं। 'मेक इन इंडिया' अभियान के तहत रक्षा उत्पादन में निजी क्षेत्र की वृद्धि बढ़ने की संभावना है। ऐसा होने पर ओएफबी और भी किनारे की ओर धकेल दिया जाएगा, अगर जल्द ही व्यापक सुधार नहीं किया जाता है।

ओएफबी को कंपनी के रूप में तब्दील करने का विचार लंबे समय से चर्चा में रहा है। सबसे पहले वर्ष 2000 में गठित नायर समिति ने इसका सुझाव दिया था। उसके बाद केलकर समिति ने भी 2005 की अपनी रिपोर्ट में ओएफबी को कंपनी बनाने की जोरदार वकालत की थी। हालांकि सरकारों ने इस सुझाव को अनदेखा ही किए रखा था। लेकिन मोदी सरकार ने रक्षा उत्पादन में सुधार के एक अहम अंग के तौर पर इस सुझाव को लागू करने का साहस आखिरकार कर दिखाया है।

ओएफबी को कंपनी के रूप में तब्दील करने से यह रक्षा क्षेत्र का एक सार्वजनिक उपक्रम (डीपीएसयू) बन जाएगा और उसका प्रशासनिक नियंत्रण रक्षा मंत्रालय के पास ही रहेगा। इस तरह वस्तुस्थिति ओएफबी का निजीकरण करने की अफवाहों से काफी अलग है। एक रक्षा उपक्रम होने और उसमें केंद्र सरकार की 100 फीसदी हिस्सेदारी होने पर ओएफबी के पास निर्णय-निर्माण में काफी अधिक स्वायत्तता मिल जाएगी। इसका प्रबंधन इसके अपने निदेशक मंडल ही रहेगा। सरकार के व्यापक दिशानिर्देशों के मद्देनजर यह अपनी वित्तीय एवं निवेश योजनाओं के बारे में खुद ही फैसला कर सकता है, खुद ही संयुक्त उद्यम लगाने एवं अनुषंगी इकाइयां बनाने और शोध एवं विकास को बढ़ावा देने की दिशा में प्रयास कर सकता है और इनमें बाहरी एजेंसियों के दखल की गुंजाइश भी नहीं रह जाएगी। इससे भी अहम बात यह है कि एक स्थिर नेतृत्व वाली कॉर्पोरेट इकाई होने से ओएफबी बाजार की परिस्थितियों के हिसाब से कदम उठाने में सक्षम हो जाएगा। निजी क्षेत्र से मिलने वाली चुनौतियों का सामना कर पाना भी आसान हो जाएगा।

आखिर में, अपने मौजूदा टर्नओवर के साथ ओएफबी कंपनी बन जाने के बाद आसानी से नवरत्न का दर्जा हासिल करने के लायक बन जाएगा। नवरत्न उपक्रम बनने से ओएफबी को वित्तीय फैसले करने में भी काफी लचीलापन मिल सकेगा। कुल मिलाकर ओएफबी के लिए अपना पुराना वैभव हासिल करने के लिए कंपनी बनने के सिवाय कोई रास्ता नहीं है। इस तरह ओएफबी भारत के रक्षा उत्पादन क्षेत्र में अपनी दमदार मौजूदगी दर्ज करा सकता है।

(लेखक एक रक्षा अर्थशास्त्री हैं और इंस्टीट्यूट फॉर डिफेंस स्टडीज ऐंड एनालिसिस के शोध अध्येता हैं)

ट्राई के एक और परामर्श पत्र से टेलीविजन उद्योग में खीझ

मीडिया मंत्र

वनिता कोहली-खांडेकर

तकरीबन 74,000 करोड़ रुपये का भारतीय प्रसारण उद्योग राहत की सांस ले ही रहा था कि नियामक की ओर से एक और बाधा सामने आ गई। गत 16 अगस्त को ट्राई ने 'प्रसारण एवं केबल सेवाओं के शुल्क संबंधी मुद्दों पर मशविरा पत्र' जारी किया। अभी कुछ ही महीने पहले फरवरी में एनटीओ (नया शुल्क आदेश) लागू किया गया था। उससे भी अहम बात यह है कि उपभोक्ताओं ने नई नियामकीय व्यवस्था को पूरी तरह अपना लिया है। इसी बीच ट्राई ने एक नया मशविरा पत्र प्रस्तावित किया है जिसमें चैनलों के मूल्य और उनका समूह तैयार करने को लेकर आमूलचूल बदलाव की बात कही गई है। गत 23 अगस्त को जारी इंडियन ब्रॉडकास्टिंग फाउंडेशन की प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया है कि यह किसी भी उद्योग के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक स्थिर नियामकीय व्यवस्था के तमाम मानकों के एकदम विपरीत है। अगर प्रसारकों के विरोध की अनदेखी भी कर दी जाए तो भी ट्राई की जल्दबाजी और यह मशविरा पत्र समझ से परे है। बीते 15 वर्ष के दौरान ट्राई ही प्रसारण नियामक रहा है। इस दौरान इसके अधिकांश पत्र सुस्पष्ट और अच्छी तरह विश्लेषित रहे हैं। परंतु यह पत्र बंडलिंग के खिलाफ है। अपने मूल आदेश में यह एक बड़ी बात थी। जनवरी में जब मैंने ट्राई के चेयरमैन आर एस शर्मा से इस बारे में पूछा था तब उन्होंने कहा था कि ट्राई बंडलिंग के खिलाफ नहीं है। परंतु अब यह नया मशविरा पत्र सामने है और यह बंडलिंग पर सवाल उठा रहा है, इसमें कहा गया है कि कैसे छूट दी जानी चाहिए और कीमतों की सीमा कैसे तय होनी चाहिए? इसके लिए चुना गया समय पूरी तरह गलत है। बाजार में नई शुल्क व्यवस्था लागू हुए केवल पांच महीने का समय बीता है। इसके प्रभाव का अभी आकलन होना है।

इसका पहला सकारात्मक प्रभाव, जिसके लिए ट्राई को श्रेय भी लेना चाहिए, वह यह है कि इससे पारदर्शिता आई है। इसके परिणामस्वरूप प्रसारकों का सबस्क्रिप्शन राजस्व और मल्टी सिस्टम ऑपरेटर्स यानी एमएसओ राजस्व में भी इजाफा हुआ है क्योंकि अधिक घर जुड़े हैं और राजस्व लीकेज पर रोक लगी है। बहरहाल, चूंकि लोग अपनी पसंद के चैनल खुद चुनते हैं इसलिए कई चैनलों की पहुंच खत्म हो गई है और तमाम प्रसारकों के विज्ञापन राजस्व में कमी आई है।

दूसरा, कीमतों में इसलिए इजाफा हुआ है क्योंकि अब हर घर को हर माह 154 रुपये का नेटवर्क शुल्क अदा करना है जिसमें 100 चैनल आते हैं। इनमें से दूरदर्शन के 25 चैनल अनिवार्य इसलिए कि आप 75 चैनलों के लिए यह भुगतान करते हैं। अन्य चैनलों का मूल्य इससे अलग होता है। ध्यान रहे कि निजी टेलीविजन चैनलों के 28 वर्ष के इतिहास में औसत केबल टीवी मूल्य कई अन्य जिंसों की तुलना में औसत मुद्रास्फीति दर से कम रहा है। यह भी कि केबल टीवी कोई अनिवार्य जिंस नहीं है।

तीसरा, उपभोक्ताओं की चयन क्षमता कम हुई है। औसत भारतीय परिवार एक महीने में 40 से 60 चैनल देखता था। इनमें विभिन्न भाषाओं के खेल, संगीत, मनोरंजन, फिल्म आदि तमाम तरह के चैनल शामिल हैं। नई शुल्क व्यवस्था लागू होने के बाद यह घटकर 32 से 48 चैनल प्रति परिवार रह गई है। याद रहे कि देश के 19.7 करोड़ टेलीविजन वाले परिवारों में से 98 फीसदी के पास ऐसा टेलीविजन है जिसे लोग साथ बैठकर देखते हैं। इसलिए, पिताजी, मां, बच्चे, दादा-दादी सबकी अपनी-अपनी पसंद है। बंडलिंग की व्यवस्था के खिलाफ जाने के बाद लोगों ने चैनल देखना कम कर दिया। ग्राहक अब विविध चैनलों के बजाय मजबूर भाषाई या विषय के आधार पर चैनल चुनने को मजबूर हैं।

यहां ट्राई की यह दलील सामने आती है कि बंडलिंग उपभोक्ताओं के हित में नहीं है। वैश्विक स्तर पर अधिकांश उद्योगों में बंडलिंग की जाती है। इसमें विमानन, होटल, मीडिया, उपभोक्ता वस्तु और दूरसंचार सभी शामिल हैं। ये अपेक्षाकृत सस्ते होते हैं इनके जरिये काफी विविधता भी हासिल होती है। चौथा प्रभाव उस बदलाव के रूप में सामने आया है जिसके तहत करीब 20 लाख परिवारों ने केबल के स्थान पर डीटीएच को अपना लिया। अब देश में डीटीएच उपभोक्ताओं की संख्या 7 करोड़ से अधिक है। अपने संसाधनों और कॉल सेंटर के कारण डीटीएच, केबल की तुलना में कहीं अधिक सुविधाजनक है। परंतु देश में करीब 10 करोड़ परिवारों के पास केबल टीवी है और उनके पास वह लचीलापन नहीं है जो डीटीएच में है। यह बात इन उपभोक्ताओं को हताश करती है। राजस्व में सुधार होने पर अधिकांश एमएसओ तकनीक में निवेश करेंगे और यह समस्या भी हल हो जाएगी।

ऐसे में इस पर्चे को प्रस्तुत करने की क्या हड़बड़ी थी?

एक कदम पीछे हटकर देखें तो 2019 में बंडल, चयन और लचीलेपन को लेकर बहस निरर्थक प्रतीत होती है। हॉटस्टार, जी 5, वूट आदि चैनल उन्हीं कार्यक्रमों को दिखाते हैं जो उनकी मूल कंपनियां स्टार, जी या वायकॉम 18 दिखाती हैं। परंतु इनकी कीमतों पर नियमन नहीं है, होना भी नहीं चाहिए। ऐसे में केबल या डीटीएच के लिए उन्हीं चैनलों या कार्यक्रमों की ऐसी कीमत क्यों होनी चाहिए? तीन अलग-अलग तकनीक हैं केबल, डीटीएच और ऑनलाइन। अनगिनत पैकेज और उपकरण हैं जिन पर उपभोक्ता टीवी या मनोरंजन देख सकता है। ऐसे में इस उद्योग के इतने सूक्ष्म प्रबंधन से इसका दम घोंटना कहां तक उचित है?

अधिकांश मीडिया नियामक मसलन ऑफकॉम आमतौर पर बिना नियमन और उसके बाद नियमन की लागत का आकलन करते हैं। किसी भी नई अनुशंसा के लिए वे प्रभाव के विश्लेषण से काम लेते हैं। उद्योग जगत और उपभोक्ता संगठनों की मांग है कि ट्राई को भी ऐसा ही करना चाहिए। ऐसा करने से शायद उसकी मनोदशा बदले और हर कुछ महीनों में मशविरा पत्रों से निजात मिल सके।

कानाफूसी

आधार से भोजन

आधार ने कई लोगों के जीवन को कई तरह से सुगम बनाया है। परंतु मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले के एक मंदिर में यह स्थानीय श्रद्धालुओं और बाहरी श्रद्धालुओं को अलग-अलग करने के काम आ रहा था। दरअसल मंदिर प्रशासन बाहरी श्रद्धालुओं के लिए लंगर की व्यवस्था करता है लेकिन पिछले कुछ समय से मंदिर प्रशासन इस बात को लेकर परेशान था कि स्थानीय श्रद्धालु भी बाहरी लोगों के साथ बैठकर भोजन कर लेते हैं। इस समस्या से निजात पाने के लिए आखिरकार मंदिर प्रशासन ने एक तरकीब अपनाई। उसने लंगर खाने वाले श्रद्धालुओं से उनका आधार कार्ड मांगना शुरू कर दिया। इससे पता चल जाता था कि कौन स्थानीय है और कौन बाहरी। हालांकि यह मामला जब सुर्खियों में आया तो गुरुवार को जिलाधिकारी मनोज पुष्प खुद मंदिर पहुंचे और उन्होंने यह व्यवस्था खत्म कर दी।

सबका जन्मदिन एक

मध्य प्रदेश के शिवपुरी जिले का एक गांव इन दिनों सुर्खियों में है। दरअसल इस गांव के अधिकांश रहवासियों के आधार कार्ड में उनका जन्मदिन एक ही है यानी एक जनवरी। शिवपुरी का काकरा गांव आदिवासी बहुल गांव है और एक समय ऐसा भी था जब इस गांव के अधिकांश लोगों के पास अपने जन्म का कोई ठोस प्रमाण नहीं रहता था। ऐसे में आधार नामांकन करने वालों ने उनके जन्मदिन की जगह एक जनवरी की तारीख डाल दी। दरअसल विशिष्ट पहचान प्राधिकरण के मुताबिक अगर कोई व्यक्ति जन्म तारीख का सही प्रमाण नहीं दे पाता है तो वह बिना दस्तावेजों के भी आधार बनवा सकता है। बाद में अगर उसे जन्म का प्रमाण पत्र मिल जाता है तो वह अपने आधार कार्ड में इसे सुधरवा सकता है। अधिकारियों का कहना है कि यह सुविधा होने के बाद भी शायद ही कोई इसमें सुधार करवाने आया हो। यही कारण है कि लगभग पूरे गांव की जन्म की तारीख और महीना एक है।

आपका पक्ष

बच्चों को खेल से जोड़ना जरूरी

खेल हमारे जीवन का अहम हिस्सा है और उससे ही हमारा संपूर्ण विकास होता है। लेकिन दुर्भाग्य से आज के बच्चे खेलों के प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। बच्चे खेलने के बजाय मोबाइल, टीवी एवं मनोरंजन जैसे साधनों को अपने जीवन का हिस्सा बना रहे हैं। यह उनके भविष्य के लिए घातक साबित हो सकता है। यह उनके स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक साबित हो रहा है। बच्चों द्वारा खेल से दूरी बनाए जाने से उनमें संघर्ष क्षमता, नेतृत्व क्षमता तथा उनमें सहनशीलता कम होने का प्रभाव पड़ रहा है। बच्चों के विकास के लिए खेल का होना बहुत जरूरी रही है। वर्तमान में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी खेल को प्रोत्साहन दे रहे हैं। भाजपा सरकार खेल संस्कृति को बढ़ावा दे रही है। आज भारत को युवा शक्ति के रूप में उभरना जरूरी है। खेल को बढ़ावा देने के लिए सभी सरकारी तथा गैर सरकारी स्कूलों में प्रतियोगिताओं का आयोजन कराने की जरूरत है। खेल से बच्चों को जोड़ने के लिए सरकार को ग्राम स्तर से लेकर ब्लॉक, जनपद, मंडल और प्रदेश स्तर तक खेलों से संबंधित संसाधनों को जुटाना जरूरी है। आज के परिवेश में खेल के मैदान विकसित करने होंगे। बढ़ती आबादी से खेल के मैदान समाप्त हो रहे हैं। सरकार के साथ ही हम सभी का दायित्व बनता है कि अपने-अपने बच्चों को मोबाइल, टीवी आदि मनोरंजन के साधन से दूर रखें जिससे खेल के लिए प्रेरित कर सकें।

राजू, गोरखपुर

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गुरुवार को फिट इंडिया अभियान की शुरुआत की

बैंक धोखाधड़ी के मामले बढ़े

रिजर्व बैंक की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार पिछले साल 71,543 करोड़ रुपये की बैंक धोखाधड़ी के 6,801 मामले दर्ज किए हैं। इससे पिछले साल में यह आंकड़ा 5,916 और धोखाधड़ी की राशि 41,167 करोड़ रुपये थी। आमतौर पर बैंक अपने ग्राहकों को ईमेल और मोबाइल में मेसेज भेजकर किसी भी व्यक्ति को एटीएम कार्ड का पिन, ओटीपी या अन्य जानकारी देने से मना करता है। इसके बावजूद लोगों की लापरवाही के कारण उनके बैंक खाते से पैसे निकाल लिए जाते हैं। इसके बाद व्यक्ति धोखाधड़ी का मामला दर्ज कराता है। लेकिन बैंक यह देखता है कि किसकी लापरवाही के कारण बैंक से पैसे निकाले गए हैं। अगर कोई व्यक्ति धोखाधड़ी करने वाले को ओटीपी बता देता है तो ऐसे में बैंक अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेता है और व्यक्ति की गलती साबित कर देता है। ऐसे में धोखाधड़ी के पैसे वापस नहीं मिलते हैं। ऐसे में ग्राहकों को किसी भी व्यक्ति को अपने बैंक खाते से संबंधित जानकारी नहीं देनी चाहिए जिससे वे किसी धोखाधड़ी के शिकार होने से बच सकें।

राजेश कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।